सम्पादकीय

क्या लिखूँ क्योंकर लिखूँ

प्रिय मित्रो,

अनेक वर्षों तक दि इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइन्स तथा भारतीय राजनीति विज्ञान शोध पत्रिका का संपादन करने तथा निरन्तर संपादकीय लिखते हुए कभी इतना अधिक किंकर्तव्यविमूढ़ नही हुआ जितना यह सम्पादकीय लिखते समय हो रहा हूँ। पहला कारण हो कदाचित् सहज स्वाभाविक है और वह यह कि सम्भवतः सम्पादक के रूप में मेरा यह अन्तिम अंशदान है। परन्तु दूसरा कारण जटिल है और वह यह है कि अनिर्णय की स्थिति में जान नही पा रहा हूँ कि किस विषय पर लिखूँ।

सबसे पहले सोचा कि वर्तमान भारतीय राजनीति की दशा पर लिखूँ। पर क्या लिखूँ। हमने संसदीय लोकतंत्र को क्या बना डाला है, इस पर लिखूँ। राष्ट्रपति पद को गर्हित विषवमन का केन्द्र बिन्दु बनाए जाने पर लिखूँ। विश्व के विशालतम लोकतन्त्र के सर्वोच्च संवैधानिक पद की सार्वजनिक अवमानना पर लिखूँ। भारतीय गणराज्य के शीर्षाधिकारी की अर्हताओं के किसी विशिष्ट परिवार के प्रति अप्रतिहत निष्ठा व प्रतिबद्धताओं में परिणत हो जाने पर लिखूँ। शीर्ष राजकीय पदों पर आसन्न व्यक्तियों के निर्लज्ज सार्वजनिक आचरण अथवा क्रियाकलाप पर लिखूँ। सार्वजनिक धन के निर्मम दुरुपयोग और सार्वजनिक पदों के व्यक्तिगत हित हेतु अस्वीकार्य अपहरण पर लिखूँ। नए राष्ट्रपति के चुनाव में प्रत्याशियों के चयन में योग्यता की सायास उपेक्षा तथा व्यक्तियों की नग्न महत्वाकांक्षाओं के साहसिक प्रकटीकरण पर लिखूँ। समष्टि, संस्था अथवा वृहत् निष्ठाओं को अपदस्थ कर विशिष्ट व्यक्ति, परिवार तथा अन्य के प्रति अनन्य निष्ठाओं को शिरोधार्य कर अकर्मण्य तथा असहाय प्रतिभासमान शीर्ष पुरुषों की निरुपयता तथा निष्प्रयोज्यता पर लिखूँ। संवैधानिक संस्थाओं के परस्पर संघर्ष तथा वर्धमान वैमनस्य पर लिखूँ। कार्यपालिका की निष्क्रियता पर लिखूँ। व्यवस्थापिका की आत्ममुग्धता पर लिखूँ। मंत्रियों की अगम्भीर संवेदनहीन तथा अनुत्तरदायी टिप्पणियों पर लिखूँ। विधायिकाओं में बैठे माननीयों के स्वछन्द आचार–व्यवहार पर लिखूँ। अनियन्त्रित तथा स्वेच्छाचारिता से निरकुंश हो गये प्रशासनिक तन्त्र पर लिखूँ। विशिष्ट व्यक्तियों के सार्वजनिक जीवन पर लिखूँ। सार्वजनिक जीवन के विशिष्ट व्यक्तियों पर लिखूँ। व्यवस्थापिका में अश्लील आचरण करते माननीय सदस्यों पर लिखूँ। विधायिका में अपनी सदस्यता की निरर्थकता की अनुभूति के बाद भी विधायिका की सर्वोच्चता की अकल्पनीय अनुलंघनीयता के ढपोर–शंखी स्वरों के गुंजायमान स्वरूप पर लिखूँ। संसदीय गरिमा की रक्षा के सर्वत्र उपस्थित पुरोधाओं तथा योद्धाओं के निजी आचरण की दुर्बलताओं एवं स्खलताओं पर लिखूँ। अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के लज्जाजनक भाषा संस्कार पर लिखूँ। सार्वजनिक धन के पीड़ादायक अपव्यय पर लिखूँ। सार्वजनिक धन और सम्पत्ति के निजी दुरुपयोग पर लिखूँ। कई लाख करोड़ का चूना राजकीय कोष को लगाकर निजी ऐश्वर्य की अभिवृद्धि करने वालों पर लिखूँ। एक सरकारी घर में तीन सौ से अधिक शासकीय टेलीफोन कनेक्शन लगवाने वालों पर लिखूँ। सैनिकों के लिए निर्मित आवासों के व्यावसायिक विक्रय कर अवैध धन संग्रह करने वालों पर लिखूँ। सार्वजनिक निर्माण विभाग, विद्युत् विभाग, सिंचाई विभाग, बदनाम विभागों की श्रेणी में उच्च शिक्षा जैसे पवित्र समझे जाने वाले विभाग को लाकर खड़ा कर देने वालों पर लिखूँ। निजी चैनलों को आगे बढ़ाने के लिए राजनीतिक पदावस्था का लाभ उठाकर करोड़ों रुपये रिश्वत के रूप में लेकर भी गठबन्धन की राजनीति के चलते आराम से घूमने वालों पर लिखूँ। विभिन्न क्रीड़ा प्रतिस्पर्धाओं के आयोजनों में राजनीतिक नेतृत्व की निरन्तर वृद्धिमान रुचि पर लिखूँ। क्रीड़ा संगठनों में राजनीतिक लोगों के अनावश्यक वर्चस्व पर लिखूँ। अन्तर्राष्ट्रीय खेल आयोजनों में स्वतः दृश्यमान, लज्जास्पद भ्रष्टाचार पर लिखूँ। सत्ता प्रतिष्ठान से संरक्षण प्राप्त भ्रष्ट व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह के गर्हणीय और निरंकुश आचरण पर लिखूँ। सार्वजनिक जीवन में मर्यादा के तिरोहित होने पर लिखूँ।

कार्यपालिका, व्यवस्थापिका और नौकरशाही पर न लिखूँ। अवर्णनीय तथा अकूत धन सम्पत्ति बिस्तरों में, विदेशी बैंकों में, बनामी जमीनों में, अगण्य मकानों में, बेशकीमती कृषि योग्य भूमि को विलासिता के केन्द्र के रूप में परिणत कर फार्म हाउस घोषित कर इन व्यभिचार केन्द्रों में तथा अन्य अज्ञात स्थानों में छिपाने

वाले प्रशासकों पर न लिखूँ। सार्वजनिक तथा संवैधानिक पदों का निजी तथा पूर्णतः व्यक्तिगत दुरुपयोग करने वालों पर न लिखूँ। जाति धर्म, सम्प्रदाय, भाषा, क्षेत्र से ऊपर उठकर आचरण का उपदेश देने वालों द्वारा इन्हीं संकुचित आधारों पर चुनावी राजनीति कर सत्ता प्राप्त करने वालों पर न लिखूँ। एक प्रकार की साम्प्रदायिकता को पालने पोसने वाले और दूसरे प्रकार की साम्प्रदायिकता का विरोध करने वालों पर न लिखूँ। संवैधानिक पदों पर बैठे व्यक्तियों द्वारा व्यक्तियों द्वारा अन्य संवैधानिक पदों पर व्यक्ति के सार्वजनिक अपमान पर न लिखूँ। देश के शीर्षस्थ सैन्य अधिकारी और सैन्य प्रशासक के मध्य के टकराव के कारण उत्पन्न असुविधाजनक तथा चिन्तनीय स्थिति पर न लिखूँ। राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता तथा प्रतिस्पर्धा के कारण राष्ट्रीय सुरक्षा की घोर उपेक्षा पर न लिखूँ। अर्थशास्त्र के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त अग्रगण्य वेत्ताओं के शासन में सामान्य भारतीय की आर्थिक दुर्दशा पर न लिखूँ। संघीय व्यवस्था के सर्वाधिक मूर्तिमान रूप संविद शासन के माथे अपनी समस्त निष्क्रियताओं को थोप देने की प्रवृत्ति पर न लिखूँ। संघात्मकता के घोषित पैराकारों द्वारा एकात्मता के सतत प्रयासों पर न लिखूँ। वैश्वीकरण की चकाचौंध से अर्धमीलित नेत्रों वाले नवधनाढ्य वर्गों के हितों को ध्यान में रखकर नीति निर्माण करने वाले नीति नियन्ताओं पर न लिखूँ। नागरिकों के मानसिक, सामाजिक, शैक्षणिक, चारित्रिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिए घोषित रूप से कटिबद्ध राज्य संस्था द्वारा आर्थिक संसाधन, उपादान, अनुदान तथा भिक्षा प्रदान मात्र पर केन्द्रित योजनाओं की दूरगामी निष्फलता पर न लिखूँ। नागरिकों को स्वावलम्बी बनाने के स्थान पर परावलम्बी तथा परमुखापेक्षी बनाकर तात्कालिक वाहवाही लूटने तथा इस प्रकार यथाशक्ति अपना वोट बैंक सुदृढ़ करने की दुष्प्रवृत्तियों पर न लिखूँ।

तो फिर संविधान की व्याख्या, समीक्षा तथा अर्थान्वयन करने के अधिकार से संयुक्त तथा राष्ट्रव्यापी सम्मान और प्रतिष्ठा की एकल धारिणी न्यायपालिका पर लिखूँ। तहसील, जनपद आदि के स्तर पर न्यायपालिका में व्याप्त सर्वज्ञात तथा पारस्परिकता से सवंर्धित भ्रष्टाचार पर लिखूँ। न्यायिक प्रक्रिया की अनावश्यक जटिलता, संश्लिष्टता तथा अगम्यता पर लिखूँ। वकीलों के अबूझ सन्दर्भों, व्यवस्थाओं, शुल्कों तथा कुटिल तर्कों के कारण अथवा प्रक्रियाओं की विविधता के कारण अथवा आर्थिक अक्षमताओं के कारण अथवा स्थापित नियमों प्रावधानों के कारण अथवा अन्य किसी भी कारण नियत से भी अधिक अवधि पर अपराध सिद्ध हुए बिना भी कारावासों में सड़ रहे अनेकानेक भारतीय नागरिकों के कल्पनातीत कष्टों पर लिखूँ। आर्थिक सामर्थ्य, राजनीतिक तथा प्रशासनिक सम्बन्ध तथा अन्य कारणों से शीघ्रतिशीघ्र न्यायालयों तक पहुंच जाने वाले और अत्यल्प समय में निर्णय प्राप्त कर लेने वाले श्रेष्ठि वर्ग पर लिखूँ। लगभग नियमित अन्तराल में भ्रष्टाचार के आरोपों से घिरे माननीय न्यायमूतियों पर लिखूँ। अनेकानेक माननीय न्यायालयों में लम्बित करोड़ों वादों पर लिखूँ। स्थानीय न्यायालयों में काम, आधारभूत संरचना, कर्मियों तथा सम्बन्धितों की दुर्दशा पर लिखूँ। उच्च न्यायपालिका की वन्दनीय न्यायिक सक्रियता पर लिखूँ।

लोकतान्त्रिक व्यवस्था के तीन स्तम्भों को छोड़ कर चतुर्थ स्तम्भ पर लिखूँ। संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकार के कुछेक व्यक्तियों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों, कथित टिप्पणीकारों, समादृत पत्रकारों तथा प्रच्छन्न राजनीतिज्ञों के द्वारा अविरल दुरुपयोग पर लिखूँ। सूचना–सम्प्रेषण, शिक्षण तथा मनोरंजन के घोषित क्रमबद्ध लक्ष्यों तथा उद्दश्यों के व्यतिक्रम को पत्रकारिता बताने वालों पर लिखूँ। सत्ता–प्रतिष्ठानों की निकटता के लोभ में सूचना को विज्ञापन और विज्ञापन को सूचना में परिवर्तित करने में सिद्धहस्त जादूगरों पर लिखूँ। धनोपार्जन के उद्देश्य से भारतवर्ष के अनेकानेक नगरों में व्यक्तियों, संस्थाओं, पदधारियों तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से नियमित वसूली तथा ब्लैकमेल करने में सन्नद्ध स्थानीय पत्रकारों पर लिखूँ। व्यावसायिक हितों के सम्वर्धन हेतु राष्ट्रीय समाचार माध्यमों के नगरीय सीमाओं में संकुचन पर लिखूँ। सम्पादक नाम की आदरणीय संस्था के विलोप पर लिखूँ। राजनीति, फिल्म और क्रिकेट की वर्चस्वता स्थापित करने में संलग्न संचार माध्यमों से शैक्षणिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा अन्य समाजोपयोगी सरोकारों के अदृश्य होने पर लिखूँ। फिल्मी तारक–तारिकाओं के निजी सम्बन्धों पर आधारित अफवाहों को समाचार बताकर परोसने वाले समाचार माध्यमों पर लिखूँ। नग्नता, अश्लीलता, निर्लज्जता, संस्कारहीनता तथा अभारतीयता को आधुनिकता तथा अभिव्यक्ति स्वातन्त्रय बताकर अपसंस्कृति का प्रचार करने वाले पत्रकारों पर लिखूँ।

इन सब पर भी न लिखूँ तो शिक्षा, स्वास्थ्य, अभियान्त्रिकी, कृषि, आदि सामान्य नागरिक जीवन के किस विषय और पक्ष पर लिखूँ। और फिर क्या होगा मेरे इस लिखने से ? यदि नहीं होगा तो क्या लिखूँ ? अब तक लिखने से कुछ नही हुआ तो कब तक लिखूँ ? जब मन में व्यथा हो, पीड़ा हो, वेदना हो, हताशा हो, चिन्ता हो, तो कैसे लिखूँ ? इतना कुछ अब तक लिखा गया है, कितना लिखूँ ? कौन किसी और का लिखा पढ़ता है आजकल, फिर किसको लिखूँ ? बड़ा अनिर्णय है। बड़े प्रश्न हैं। बड़े विषय हैं। बड़ा देश है। बड़ी समस्यायें हैं। बड़े ही समाधान होंगे। कब होंगे, कैसे होंगे, यह मैं नही जानता हूँ। बस अपने प्रिय कवि रामधारी सिंह दिनकर को याद कर आपको प्रणाम करता हूँ ।

समर शेष हे नही पाप का भागी केवल व्याध।
जो तटस्थ हैं समय लिखेगा उनका भी अपराध।।

इति शम्

आपका अभिन्न

मेरठ
बुद्ध पूर्णिमा

(संजीव कुमार शर्मा)